कम्युनिस्टों के दोगले चरित्र को समझो

देवभूमि त्रिविष्टप यानी तिब्बत पिछले लगभग 60 वर्षों से कम्युनिस्ट चीन के खूनी पंजों में जकड़ा हुआ है। यद्यपि आजादी की छटपटाहट सन् 1959 से ही वहाँ पर देखी जा सकती है। चीन प्रारम्भ से ही इस कोशिश में लगा रहा है कि जैसे भी हो तिब्बत में जनसांख्यिकी असन्तुलन की स्थिति पैदा कर वहाँ की मूल जाति एवं संस्कृति को नष्ट कर दिया जाय। चीन पिछले लगभग 60 वर्षों से लगातार यह कर रहा है साथ ही सामरिक दृष्टि से भी अपनी स्थिति को मजबूती प्रदान करने के लिए उसने दुनियाँ के मस्तक तिब्बत की राजधानी ल्हासा तक तमाम पर्यावरणविदों की अपील को खारिज करते हुये रेल लाइन का निर्माण किया है। चीन की असली सोच तिब्बत के सम्बन्ध में क्या है, यह पूरी दुनियाँ ने 15 और 16 मार्च, 2008 के दिन देखा जब चीन ने शान्तिपूर्ण आन्दोलन कर रहे तिब्बत मूल के नागरिकों पर न केवल ल्हासा में अपितु समूचे तिब्बत के अन्दर व्यापक पैमाने पर नरसंहार की घटनाओं को अंजाम दिया। इस नरसंहार में लगभग 150 से अधिक निर्दोष नागरिक मारे गये। कम्युनिस्ट चीन के लिए यह बड़ी घटना नहीं है। विश्व इतिहास में सर्वाधिक मौतें अगर कहीं हुई हैं तो चीन के अन्दर, साम्यवादी हिंसा में साढ़े छः करोड़ से अधिक मौतें हुई हैं। ये मौतें किसी युद्ध में मारे गये सैनिकों की नहीं, बल्कि आम नागरिकों, बुद्धिजीवियों, छात्रों, लेखकों, कलाकारों, किसानों, दुकानदारों, व्यापारियों, वैज्ञानिकों, मजदूरों आदि की निर्मम हत्याएँ थीं। भारत के अन्दर पिछले एक दशक में नक्सली हिंसा में 15 हजार से अधिक नागरिक तथा 6 हजार से अधिक सेनापुलिस के जवान शहीद हुए हैं। इसी प्रकार नेपाल के /अर्धसैनिक / अन्दर एक दशक में माओवाद के नाम पर लगभग21 हजार से अधिक निर्दोष नागरिकों की जानें गई हैं। यह नरसंहार अचानक नहीं प्रारम्भ हुआ। यह एक योजना का हिस्सा है जो समयसमय पर उसने अपने चरित-्र के माध्यम से दिखाया भी है। चीन के इस नृशंस काण्ड पर आज जब विश्व समुदाय उद्वेलित है,

अमेरिका, फ्रान्स, जापान आदि देशों ने चीनी कार्यवाही की निन्दा की है, वहीं विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहलाने वाला भारत चीन की कार्यवाही पर मौन क्यों है? चीन के खूनी पंजे में जकड़ा नेपाल भी किंकर्तव्यविमूढ़ता की सी स्थिति में है। भारत और नेपाल को यह समझने में देरी नहीं करनी चाहिए कि आज तिब्बत के अन्दर सांस्कृतिक नरसंहार की घटना को चीन तोपों और बख्तरबन्द गाड़ियों के माध्यम से अंजाम दे रहा है। अगर हम उस पर इसी प्रकार मौन रहे तो कल चीन की विस्तारवादी योजना की चपेट में दोनों देश आ जायँ इस पर कोई आश्चर्य नहीं। चीन जैसे धोखेबाज, अविश्वसनीय पड़ोसी पर जब भी भारत ने भरोसा किया, धोखा ही मिला। सन् 1959 में तिब्बत के मामले में भारत का मौन अन्ततः सन् 1962 के हमले के जख्म से हमें मिला। हमें चीन के हिंसक चरित्र को समझने में देरी नहीं करनी चाहिए। जब भी भारत ने चीन से दोस्ती का हाथ बढ़ाया बदले में मातृभूमि के हिस्से को भी गँवाया। आज भी चीन लगातार इस प्रकार की हरकतों से बाज नहीं आया है। प्रधानमंत्री डॉमनमोहन सिंह के अरुणांचल प्रदेश की यात्रा . के दौरान चीन की प्रतिक्रिया, कश्मीर, सिक्किम, अरुणांचल प्रदेश आदि में भी चीन की बराबर होती घुसपैठ और प्रतिक्रियाएँ उसकी विस्तारवादी सोच की ओर स्पष्ट इशारे भी करती हैं। यद्यपि भारत के किसी भी भाग में जाना भारत के किसी भी नागरिक का जन्म सिद्ध अधिकार है। बावजूद इसके चीन की भारत के प्रधानमंत्री की अरुणांचल प्रदेश की यात्रा पर दी गई प्रतिक्रिया अत्यन्त आपत्तिजनक तो है ही इससे भी आश्चर्यजनक इस पर भारत के कम्युनिस्टों की भूमिका है। छोटी-आसमान एक करने वाले भारत के कम्युनिस्ट आज -छोटी घटनाओं पर जमीन तिब्बत के मामले मेंमौन हैं। भारत और नेपाल में लोकतंत्र और स्वतंत्रता के सबसे बड़े कथित पैरोकार बने भारत के कम्युनिस्ट चीन में लोकतंत्र तथा तिब्बत की स्वाधीनता के प्रश्न पर मौन क्यों हैं? कम्युनिस्टों का इतिहास ही देशद्रोह और जनद्रोह का रहा है। भारत के स्वाधीनता संघर्ष का विरोध रहा हो अथवा सन् 1942 के ''भारत छोड़ो'' आन्दोलन के साथ विश्वासघात, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस तथा

सरदार पटेल जैसे महापुरुषों के प्रति अपमानजनक टिप्पणी का मामला रहा हो अथवा भारत विभाजन के लिये मुस्लिम लीग का समर्थन करने, 1948 में स्वतंत्र भारत की सरकार के खिलाफ सशस्त्र विद्रोह का मामला हो अथवा सन् 1962 में भारत पर चीन के आक्रमण पर चीन की तरफदारी अथवा सन् 1975 में आपातकाल का समर्थन यह दोगला चरित्र ही कम्युनिस्टों की पहचान रही है। भारत की जनता को कम्युनिस्टों के इस दोहरे चरित्र को समझने में अब भूल नहीं करनी चाहिए अन्यथा तिब्बत, ताइवान तथा हांगकांग बनने से नेपाल समेत भारत के भी कई हिस्सों को कोई रोक नहीं पायेगा।